मुहम्मद याकूब

बनाम

जम्मू और कश्मीर राज्य

(Mohamad Yaqub

v.

The State of Jammu and Kashmir)

(10 नवम्बर, 1967)

(मुख्य न्यायाधिपति के० एन० वांचू न्यायाधिपति एम० हिदायतुल्लाह, जे० सी० शाह, आर० एस० बछावत, वी० रामास्वामी, जी० के० मित्तर और के० एस० हेगडे)

संविधान, 1950—अनुच्छेद 13 (2), 14, 21, 22, 31, 166 और 359 (1)—पिटीशनर को भारत रक्षा नियमों के अधीन निरुद्ध किया जाना—पिटीशनर को पुर्नविलोकन प्राधिकारी के समक्ष अपना पक्षकथन करने का अवसर न दिया जाना—उक्त निरोध के अवैध हो जाने पर सरकार द्वारा नए सिरे से निरोध आदेश पारित किया जाना—अनुच्छेद 359 के अधीन कोई आदेश अनुच्छेद 13 (2) के अन्तर्गत विधि नहीं है—यह नहीं कहा जा सकता कि केवल अनुच्छेद 22 या अनुच्छेद 31 (2) के अधीन ही मूल अधिकारों को अनुच्छेद 359 के अधीन निलम्बित किया जा सकता है—यदि निरोध भारत रक्षा अधिनियम या नियमों के अधीन किया गया है तो कैदी को अनुच्छेद 22 (5) के अधीन किसी आधार को पेश करने का प्रश्न नहीं उठता कि क्या संपूर्ण अनुच्छेद 22 निलंबित कर दिया गया है।

संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन पिटीशन द्वारा पिटीशनर ने भारत रक्षा नियम, 1962 के नियम 30 (1) (ख) के अधीन उसके विरुद्ध पारित निरोध के आदेश को चुनौती दी है। उसकी ओर से अन्य बातों के साथ यह दलील दी गई थी कि (i) 3 नवंबर, 1962 को संविधान के अनुच्छेद 359(1) के अधीन 11 नवंबर, 1962 को यथा संशोधित राष्ट्रपति द्वारा पारित आदेश, जिसमें अनुच्छेद 14, 21 और 22 द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों के लिए किसी न्यायालय को समावेदित करने के अधिकार को निलम्बित कर दिया गया था

1967(11) eILR(PAT) SC 1

यदि किसी व्यक्ति को भारत रक्षा अध्यादेश, 1962 की संख्या 4 या तद्धीन बनाए गए किसी नियम या आदेश के अधीन आपात कालावधि के दौरान ऐसे अधिकार से वंचित कर दिया गया था संविधान के अनुच्छेद 13(2) के अर्थान्तर्गत विधि थी और इसलिए इसको उसी मूल अधिकार के प्रवर्तन सहित संविधान के भाग 3 के मूल अधिकारों के विरुद्ध जांचा जा सकता था जिन्हें निलंबित किया गया है, कि केवल ऐसे मूल अधिकारों को निलंबित किया जा सकता है जिनका इसमें आपात की उद्घोषणा करने से है अर्थात् राष्ट्रपति अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश द्वारा केवल अनुच्छेद 22 और 31 (ii) के अधिकारों को ही निलंबित कर सकता है। कि प्रस्तुत मामलों में अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश अनुच्छेद 14 का अतिक्रामी था क्योंकि इसने कार्यपालिका को मनमाने विवेकाधिकार के प्रयोग से इस बात का विनिश्चय करने के लिए समर्थ किया था कि क्या किसी व्यक्ति को भारत रक्षा अधि-नियम, 1962 का 51 या निवारक निरोध अधिनियम के अधिक कठोर उपबंधों के अधीन निरुद्ध किया जा सकता है। कि अनुच्छेद 359 की भाषा को देखते हुए भारत रक्षा अधिनियम या नियमों में इस बात के स्पष्ट उपबंध होने चाहिए कि अनुच्छेद 13, 21 और 22 के अधीन मूल अधिकारों का प्रवर्तन निलंबित कर दिया गया था और ऐसे उपबंध के न होने पर अनुच्छेद 359 के अधीन पारित आदेश, संविधान के भाग 3 के अधीन जांच किए जाने के लिए निरोध आदेश के रास्ते में नहीं खड़ा हो सकता। (iii) अनुच्छेद 25 (5) इस बात की अपेक्षा करता है कि निरोध के आधार को कैदी को बता दिया गया जाना चाहिए और नवंबर, 1962 को राष्ट्रपति का आदेश इस अपेक्षा को समाप्त नहीं करता जो प्रस्तुत मामले में पूरी नहीं की गई है और (iv) कि निरोध का आदेश हम संविधान के अनुच्छेद 166 के अपेक्षित प्ररूप में नहीं और इसलिए राज्य सरकार को यह सिद्ध करना होगा। अपील को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित—अनुच्छेद 359 (1) के अधीन पारित आदेश को अनुच्छेद 13 (2) की सहायता से उसी मूल अधिकार के अधीन नहीं परखा जाता जिसके प्रवर्तन को यह निलंबित करता है। चाहे अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश को इसकी विस्तृत भाव में विधि मान भी लिया जाए तो यह अनुच्छेद 13 (2) के अर्थान्तर्गत विधि नहीं हो सकता। क्योंकि यदि ऐसी बात होती तो अनुच्छेद निरर्थक हो जाता। अनुच्छेद 359 स्पष्ट रूप से उस कालावधि के दौरान राष्ट्रपति को शक्तियां देता है जबकि आपात की घोषणा प्रवर्तन में है कि वह भाग 3 द्वारा प्रदत्त किन्हीं भी मूल अधिकारों के प्रवर्तन को निलंबित कर सकता है। इसमें ऐसी कोई बात नहीं है जो किसी प्रकार से राष्ट्रपति की शक्ति को परिसीमत करती हो और इसके बारे में वह खुद विनिश्चय कर

सकता है कि कौन से मूल अधिकारों के प्रवर्तन को आपात के दौरान निलंबित किया जाना चाहिए। अनुच्छेद 359 में यह एक मूल धारणा है कि राष्ट्रपति भारत की सुरक्षा के हित में मूल अधिकारों में से किसी को भी निलंबित करने की आवश्यकता महसूस कर सकते हैं और मूल धारणा को देखते हुए जिसके इस प्रश्न की पड़ताल करने की कोई गुन्जाइश नहीं है कि क्या मूल अधिकारों का, जिसके प्रवर्तन को राष्ट्रपति ने अनुच्छेद 359 के अधीन निलंबित कर दिया है, संबंध भारत की सुरक्षा से है जिसको युद्ध से हो या बाहरी आक्रमण या आन्तरिक उपद्रव से खतरा है यह नहीं कहा जा सकता कि अनुच्छेद 22 या अनुच्छेद 31 (3) के अधीन मूल अधिकारों को अनुच्छेद 359 के अधीन ही निलंबित किया जा सकता है। (पैरा 6 और 9)

चाहे भारत रक्षा अधिनियम या नियमों के अधीन निरोध के उपबंध अधिक कठोर है, अनुच्छेद 359 के अधीन अनुच्छेद 14 के निलंबन के पश्चात् अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश का अनुच्छेद 14 के अधीन बुरा होने का प्रश्न नहीं उठता।

राष्ट्रपति के आदेश का अभिप्राय यह है कि यदि अनुच्छेद 14, 21 और 22 के अधीन किसी व्यक्ति के मूल अधिकार का अध्यादेश (जिसे बाद में अधिनियम द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया हो) के अधीन या किसी नियम या आदेश के अधीन की गई किसी कार्यवाही से अतिक्रमण किया गया है तो वह कार्यवाही उन मूल अधिकारों के आलोचनाधीन नहीं परखी जा सकती। इस लिए अनुच्छेद 14, 21 और 22 के अधीन मूल अधिकारों के प्रवर्तन का निलंबन करने के लिए अधिनियम या नियमों में कोई स्पष्ट उपबंध करने की आवश्यकता नहीं है (पैरा 13)

चूंकि राष्ट्रपति का आदेश, जिसमें उसने अनुच्छेद 22 को निलंबित किया था, विधिमान्य रूप से किया गया था। अनुच्छेद 22 (5) के अधीन कैदी को कोई आधार पेश करने का प्रश्न नहीं उठता कि निरोध भारत रक्षा अधिनियम या नियमों के अधीन किया गया है क्योंकि संपूर्ण अनुच्छेद 22 निलंबित कर दिया गया था। (पैरा 14)

अनुच्छेद 166 जम्मू और कश्मीर राज्य को लागू नहीं होता और चूंकि निरोध आदेश जम्मू कश्मीर संविधान की धारा 45 के द्वारा अपेक्षित प्रकार से किया गया था इसे विधिमान्य रूप से किया गया माल लिया जाना चाहिए (पैरा 16)

यद्यपि अनुच्छेद 359 (1) के अधीन मूल अधिकार का निलंबन या तो संपूर्ण भारत के लिए या भारत अधिक्षेत्र के किसी भाग के लिए किया जा

सकता है गुलाम सरवार का मामला इस बात की ओर संकेत करता है कि राष्ट्रपति को व्यक्तियों की किसी श्रेणी तक इस आदेश के विस्तार को निर्बंधित करने से रोकने की कोई बात कही है। बशर्ते कि आदेश का प्रवर्तन किसी क्षेत्र या किसी कालावधि के लिए सीमित हो। चूंकि आदेश संपूर्ण भारत के लिए और आपात के दौरान लागू था यद्यपि इससे एक श्रेणी अर्थात् विदेशियों पर प्रभाव पड़ा है से पुष्ट कर दिया गया था। यह अनुच्छेद 14 की प्रासंगिता नहीं है। ऐसा इसलिए कहा गया था क्योंकि दलील यह थी कि आदेश केवल भारत के अधिक्षेत्र के संपूर्ण या भाग के संबंध में ही हो सकता था न कि एक श्रेणी अर्थात् विदेशियों के संबंध में उसका अर्थ यह था कि आदेश पर अनुच्छेद 359 (1) के शब्दों के संबंध में विचार किया गया था। गुलाम सरवार के मामले में विनिश्चय को उस मामले में प्रयुक्त भाषा के विस्तार को देखते हुए जो अर्थ दिया जाता रहा है और प्रस्तुत मामले में बहुमत का विनिश्चय भी अन्य दिशा में भाषा की विस्तृता से आक्रांत है जब कि सच्चाई बीचों-बीच है। (पैरा 21)

निर्दिष्ट निर्णय

[1968] [1968] 1 एस० सी० आर० 197 :
जगदेव सिंह बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य
Jagdev Singh *v.* State of Jammu and Kashmir); 1,17

[1967] ए० आई० आर० 1967 एस० सी० 1507 :
पी० एल० लखनपाल बनाम भारत संघ
(P. L. Lakhanpal *v.* Union of India). 1,17

विसम्मत निर्णय

[1967] [1967] 2 एस० सी० आर० 271 :
गुलाम सरवर बनाम भारत संघ
(Ghulam Sarwar *v.* Union of India)! 8,11,20

प्रारम्भिक अधिकारिता : 1967 की रिट पिटीशन संख्या 109 से 114, 117, 118, 120, 121, 128, 133, 142, 143, 186, 190 और 191.

मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन पिटीशन।

पिटीशनरों की ओर से श्री एम० के० राममूर्ति
1967 की रिट पिटीशन सं०

109, 142 और 143 में	
पिटीशनरों की ओर से (1967 की रिट पिटीशन सं० 110, 114, और 118 में)	एस० शौकत अली
पिटीशनरों की ओर से 1967 की रिट पिटीशन सं० 117, 120 और 121 में	जनार्दन शर्मा
पिटीशनरों की ओर से	आर० सी० प्रसाद
पिटीशनरों की ओर से 1967 की रिट पिटीशन सं० 186, 190, 191 में	एम० के० राममूर्ति **और** विनीत कुमार
प्रत्यर्थी की ओर से 1967 की रिट पिटीशन सं० 109, 142 और 143 में	सर्वश्री सी० के० दफ्तरी, अटार्नी जनरल और एस० पी० नायर
प्रत्यर्थी की ओर से 1967 की रिट पिटीशन सं० 110 में	जी० आर० राजगोपाल, आर० एच० ढेवर और एस० पी० नायर
प्रत्यर्थी की ओर से 1967 की रिट पिटीशन सं० 111, 114, 117, 118, 119, 121, 128 से 133, 186, 190 और 191 में	**श्री** आर० गोपाल **कृष्ण और** श्री एस० पी० नायर

मुख्य न्यायाधिपति **वांचू**, न्यायाधिपति **बछावत्**, मित्तर और **हेगडे का** निर्णय मुख्य न्यायाधिपति वांचू ने दिया।

न्यायाधिपति हिदायतुल्लाह ने अपनी पृथक राय दी।

मुख्य न्यायाधिपति **वांचू**--

संविधान के **अनुच्छेद** 32 के अधीन ये 21 पिटीशनें, जो **बन्दी प्रत्यक्षीकरण** के लिए **हैं**, विधि का एक सामान्य प्रश्न उठाती हैं और इन पर **साथ-साथ** विचार किया जाएगा। पिटीशनों में से एक पिटीशन (1967 **की संख्या 142)** में तथ्यों को वर्णित करना पर्याप्त है क्योंकि पिटीशनों में तथ्य **लगभग समान** हैं। पिटीशनर को 11 नवम्बर, 1966 को गिरफ्तार किया गया था और **भारत रक्षा** नियम, 1962 (जिसे इसमें इसके पश्चात् नियम कहा गया है) **के नियम** 30 (1) (ख) के अधीन पारित आदेश के अधीन निरुद्ध किया गया था। **ऐसा**

1967(11) eILR(PAT) SC 1

प्रतीत होता है कि यद्यपि आदेश का छह माह की कालावधि के पश्चात् पुनर्विलोकन किया गया था, पिटीशनर को पुनरीक्षण प्राधिकारी के समक्ष अपने मामले को पेश करने का अवसर नहीं दिया गया है। परिणामस्वरूप पी० एल० लखनपाल बनाम भारत संघ[1] के मामले में इस न्यायालय के निर्णय को देखते हुए छह मास की प्रथम कालावधि के पश्चात् पिटीशनर का निरोध अवैध हो गया था। राज्य सरकार ने इस कमी को महसूस करते हुए 11 नवम्बर, 1966 के आदेश को 3 अगस्त, 1967 को रद्द कर दिया और उसी दिन निरोध का एक नया आदेश पारित किया और इसी आदेश को हमारे समक्ष चुनौती दी जा रही है। विवाद का यह प्रश्न नहीं है कि जगदेव सिंह बनाम जम्मू कश्मीर राज्य[2] के मामले में इस न्यायालय के निर्णय को देखते हुए राज्य सरकार के लिए पुनर्विलोकन करने में औपचारिक कमी को देखते हुए पूर्व आदेश को प्रतिसंहृत करने के पश्चात् निरोध का नया आदेश पारित करने की छूट थी जो किसी भी मामले में प्रथम छह माह के पश्चात् अप्रभावी हो गया था। यदि परिस्थितियां इनके परिणामस्वरूप मूल रूप से निरोध किया गया अभी भी जारी हैं।

2. पिटीशनरों का मुख्य आक्षेप संविधान के अनुच्छेद 359 (1) के अधीन 11 नवंबर, 1962 को यथा संशोधित तारीख 3 नवंबर 1962 को पारित राष्ट्रपति का आदेश है। इस आदेश के द्वारा राष्ट्रपति ने यह घोषणा की कि संविधान के अनुच्छेद 14, 12 और 22 द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए किसी न्यायालय को समावेदित करने का अधिकार उस कालावधि के दौरान निलम्बित रहेगा जिसमें अनुच्छेद 52 (1) के अधीन जारी की गई आपात् की घोषणा प्रवृत्त थी यदि भारत रक्षा अध्यादेश, (1962 की संख्या 4) या तद्धीन बनाए गए किसी नियम या आदेश के अधीन किसी व्यक्ति को ऐसे अधिकार से वंचित किया गया है इसके अधीन "प्राधिकारी" है और इसलिए "राज्य" शब्द की परिभाषा के भीतर आता है और अनुच्छेद 359 के अधीन पारित आदेश संविधान के अनुच्छेद 13 (2) के अर्थान्तर्गत विधि है। परिणामस्वरूप अनुच्छेद 359 (1) के अधीन राष्ट्रपति द्वारा पारित आदेश संविधान के भाग 3 में प्रतिस्थापित मूल अधिकारों को आलोचनाधीन बनाने में जांचे जाने के दायित्वाधीन है। द्वितीयतः यह दलील दी गई कि अनुच्छेद 359 के अधीन पारित आदेश आपात् के संदर्भ में किया गया है और इसलिए केवल ऐसे मूल अधिकारों का प्रवर्तन निलम्बित हो सकता है जिसका उन कारणों से संबंध हो जिनके कारण आपात् की घोषणा की गई है। परिणामस्वरूप राष्ट्रपति केवल

[1] ए० आई० आर० 1967 एस० सी० 1507.

[2] [1968] 1 एस० सी० आर० 197.

अनुच्छेद 359 के अधीन पारित आदेश के अधीन अनुच्छेद 22 और 32 (2) के अधीन अधिकारों को ही निलम्बित कर सकता है, अन्य को नहीं। तृतीयतः, यह दलील दी गई कि चाहे राष्ट्रपति किसी मूल अधिकार के प्रवर्तन को बिलम्बित कर सकता है तो पारित आदेश को तब मूल अधिकार के अधीन जांचा जा सकता है जिसका प्रवर्तन निलम्बित किया गया है। चतुर्थतः यह दलील दी गई कि अनुच्छेद 359 के अधीन पारित आदेश को अनुच्छेद 14 के अधीन चुनौती दी जा सकती है और यदि ऐसा है तो प्रस्तुत मामले में पारित आदेश अनुच्छेद 14 का अतिक्रमण है और क्योंकि भारत रक्षा अधिनियम, (1962 की संख्या 51) के अधीन (इसे जिसमें इसके पश्चात् अधिनियम कहा गया है) और नियमों जबकि अन्य व्यक्तियों को निवारक निरोध अधिनियम के अधीन निरुद्ध किया जा सकता है क्योंकि अधिनियम और नियम निवारक निरोध अधिनियम द्वारा प्रदत्त शक्तियों की तुलना में निरोध की अधिक प्रबल शक्तियां देती हैं उसमें भेदभाव है क्योंकि इस बात का संकेत नहीं है कि निरोध कब अधिनियम या नियम के अधीन और निवारक विधि के अधीन कब किया जाना चाहिए। और मामले को मनमाने कार्यपालिका के विवेकाधिकार के लिए छोड़ दिया गया है। पांचवें यह दलील दी गई कि अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश की भाषा को देखते हुए अधिनियम और नियमों में इस बारे में स्पष्ट उपबंध होना चाहिए कि अनुच्छेद 14, 21 और 22 के अधीन मूल अधिकारों का प्रवर्तन निलंबित कर दिया गया था और ऐसे स्पष्ट उपबंध के न होने पर अनुच्छेद 359 के अधीन राष्ट्रपति के आदेश संविधान के भाग 3 के अधीन जांचे जाने के लिए निरोध आदेश के मार्ग में नहीं आता छठे यह दलील दी गई कि अनुच्छेद 22 (5) में इस बात का उपबंध है कि निरोध के आधार कैदी को बता दिए जाने चाहिए और राष्ट्रपति का आदेश इन आधारों को बताने की आवश्यकता को समाप्त नहीं करता।

3. इन मुख्य दलीलों के अतिरिक्त, एक अन्य पिटीशन में तीन गौण दलीलें भी दी गई और वे हैं (1) कि नया आदेश कैदियों को संसूचित नहीं किया गया और इसलिए उसका कोई लाभ नहीं। (2) कि आदेश संविधान के अनुच्छेद 166 द्वारा यथा अपेक्षित रूप में नहीं था और इसलिए राज्य सरकार को यह साबित करना चाहिए कि यह उस प्राधिकारी द्वारा पारित किया गया था जिसे ऐसा करने की शक्ति प्राप्त है और (3) कि नए आदेश असद्भावपूर्ण हैं।

4. पिटीशनों का राज्य की ओर से विरोध किया गया। पिटीशनरों की ओर से उठाए गए मुख्य प्रश्नों के उत्तर में दलीलों को विस्तार में उपवर्णित करना अनावश्यक है। यह कहना पर्याप्त है कि राज्य की ओर से दलील यह

है कि एक बार राष्ट्रपति ने यदि किसी मूल अधिकार के प्रवर्तन को निलंबित करते हुए आदेश पारित कर दिया है तो किसी प्रयोजन के लिए उस मूल अधिकार का अवलम्ब लेने की छूट नहीं है जब तक कि अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश जारी रहता है और ऐसे आदेश को किसी भी प्रकार से किसी भी रूप में उसे मूल अधिकार के प्रवर्तन द्वारा नहीं जांचा जा सकता जिसको कि निलंबित किया गया है फिर गौण प्रश्नों के बारे में राज्य ने यह दलील दी कि निरोध का नया आदेश कैदी को सूसंचित कर दिया गया था और कि आदेश जम्मू कश्मीर संविधान द्वारा अपेक्षित प्ररूप में था और कि अनुच्छेद 166 जम्मू कश्मीर राज्य को लागू नहीं होता। अन्तत: इस बात से मना किया गया कि आदेश इन मामलों में असद्भावपूर्ण था।

5. भाग 18 आपात् उपबंधों के बारे में है और अनुच्छेद 352 से प्रारम्भ होता है जिसमें इस बात की घोषणा करने का उपबंध है कि एक गंभीर आपात् अस्तित्व में है जिसके द्वारा भारत की सुरक्षा या उसके किसी या उसके समक्ष किसी भाग की सुरक्षा को खतरा है चाहे वह युद्ध या बाहरी आक्रमण से या आन्तरिक उपद्रव के कारण हो। यदि राष्ट्रपति का ऐसा समाधान हो जाता है कि अनुच्छेद 353 और 354 में आपात उद्घोषणा के प्रभाव का उपबंध है परन्तु प्रस्तुत प्रयोजनों के लिए उनका निर्देश करना अनावश्यक है। अनुच्छेद 358 में यह अधिकथित है कि उस कालावधि के दौरान जबकि ऐसा आपात् उद्घोषणा प्रवर्तन में है अनुच्छेद 19 निलम्बित रहेगा। अनुच्छेद 359, जिससे हमारा विशेषकर संबंध है, यह अधिकथित करता है कि जहां पर आपात् की उद्घोषणा प्रवर्तन में है तो राष्ट्रपति आदेश के द्वारा यह घोषणा कर सकेगा कि भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों के ऐसे प्रवर्तन के लिए किसी न्यायालय को समावेदित करने का अधिकार जैसा कि आदेश में उल्लिखित किया जाए और इस प्रकार उल्लिखित अधिकारों के प्रवर्तन के लिए न्यायालय में लम्बित सभी कार्यवाहियां उस कालावधि के दौरान जिस दौरान उद्घोषणा प्रवर्तन में है या ऐसी लघु कालावधि के लिए जो उस आदेश में विनिर्दिष्ट की जाएं निलंबित रहेंगी अनुच्छेद 359 के अधीन किया गया आदेश भारत के राज्य के सम्पूर्ण या किसी भाग में विस्तृत हो सकता है और इसे किए जाने के पश्चात् जितना शीघ्र हो सके संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखना होगा।

6. अनुच्छेद 359 के शब्दों से यह देखने में आता है कि निश्चित रूप से यह राष्ट्रपति को उस कालावधि के दौरान जबकि आपात् की उद्घोषणा प्रवर्तन में है भाग 3 द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों में से किसी के भी प्रवर्तन को निलम्बित करने की शक्तियां देता है। इस बात का विनिश्चय करना राष्ट्रपति

के ऊपर है कि कौन से मूल अधिकारों का प्रवर्तन आपात् की उद्घोषणा के प्रवर्तन के दौरान निलंबित किया जाना चाहिए। अनुच्छेद 359 में ऐसी कोई बात नहीं है जो किसी प्रकार से भी राष्ट्रपति की शक्ति के भाग 3 द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों में से किसी के प्रवर्तन को निलंबित करने के लिए सीमित करती है। हमारे विचार से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि राष्ट्रपति को भाग 3 द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों में से किसी के प्रवर्तन को निलम्बित करने की शक्ति प्राप्त है और तद्धीन ऐसी कोई बात नहीं है जो एक मूल अधिकार या अन्य मूल अधिकार के बीच भेद करती हो। जैसा कि अनुच्छेद 359 है हमें ऐसा प्रतीत होता है कि यह स्पष्ट रूप से इस बात की परिकल्पना करता है कि एक बार जब राष्ट्रपति द्वारा आपात् की उद्घोषणा जारी कर दी गई है भारत की या उसके अधिक्षेत्र के किसी भाग की सुरक्षा के लिए यह अपेक्षित है कि राष्ट्रपति भाग 3 द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों में से किसी के प्रवर्तन को निलम्बित कर दे। हमारी राय में इस बात में जांच करने की कोई गुंजाइश नहीं है कि क्या मूल अधिकार का जिसके प्रवर्तन को राष्ट्रपति ने अनुच्छेद 359 के अधीन निलम्बित कर दिया है संबंध भारत की सुरक्षा से हैं जिसका खतरा है, चाहे वह युद्ध से हो या बाहरी आक्रमण से या आन्तरिक उपद्रव से, क्योंकि अनुच्छेद 359 इस बात को मानता है कि राष्ट्रपति के लिए भारत की सुरक्षा के लिए भाग 3 में मूल अधिकारों में से किसी एक को निलम्बित करना आवश्यक हो सकता है। अतः अनुच्छेद 359 में एक मूल धारणा है कि राष्ट्रपति के लिए भाग 3 द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों में से एक के प्रवर्तन को निलम्बित करना राष्ट्रपति के लिए भारत की सुरक्षा के हित में आवश्यक हो सकता है। यदि वह उसे आवश्यक समझता है तो उस मूल धारणा को देखते हुए इस बात की जांच करना अनावश्यक है कि क्या राष्ट्रपति द्वारा निलम्बित विशिष्ट मूल अधिकार का प्रवर्तन भारत की सुरक्षा के साथ कोई संबंध रखता क्योंकि वह अनुच्छेद 359 में स्पष्ट है। इस लिए इसका अर्थ यह है कि राष्ट्रपति के लिए अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश द्वारा भाग 3 द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों में से किसी के प्रवर्तन को निलम्बित करने की छूट है। और यह अनुच्छेद यह दर्शाता है कि जहां पर जब कभी ऐसा निलम्बन किया जाता है तो वह भारत की सुरक्षा के हित में है और उसका अन्य कोई सबूत नहीं है।

7. अब हम पिटीशनर की ओर से दिए गए मुख्य आधार पर आ जाते हैं कि अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश अनुच्छेद 13 (2) के अधीन राज्य द्वारा बनाई गई विधि है और इसलिए इसे संविधान के भाग 3 के अधीन जांचा

1967(11) eILR(PAT) SC 1

जाना चाहिए। प्रस्तुत प्रयोजनों के लिए हम यह धारणा कर सकते हैं कि अनुच्छेद 12 में "राज्य" शब्द के भीतर राष्ट्रपति आ जाते हैं। हम यह भी धारणा कर सकते हैं कि अनुच्छेद 359 के अधीन राष्ट्रपति द्वारा किया गया आदेश इसके विस्तृत भाव के अधीन है तथापि प्रश्न यह है कि क्या ऐसा आदेश अनुच्छेद 13 (2) के प्रयोजन के लिए विधि समझा जा सकता है और तदधीन जांचा जा सकता है। अनुच्छेद 13 (2) और अनुच्छेद 359 उसी संविधान के भाग होने के कारण समान आधार पर हैं और दो उपबंधों को सुसंगत रूप से उस क्रम में पढ़ना होता है कि अनुच्छेद 359 के पीछे आशय पूरा हो जाए और यह अनुच्छेद 13 (2) के द्वारा बिल्कुल नष्ट न हो जाए। इसका अथ यह है कि यद्यपि अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश को इसके विस्तृत भाव में भी माना जा सकता है अनुच्छेद 13 (2) के अधीन यह विधि नहीं हो सकता क्योंकि यदि ऐसी बात होती तो अनुच्छेद 359 निरर्थक हो जाता है। संविधान ने अनुच्छेद 359 के माध्यम से यह कहा है कि राष्ट्रपति भाग 3 में मूल अधिकारों में से किसी के भी प्रवर्तन को निलम्बित कर सकेगा जहां पर आपात् की उद्घोषणा प्रवृत्त है और उसका अर्थ यह है कि आपात् की कालावधि के दौरान मूल अधिकार जिसका प्रवर्तन निलम्बित कर दिया गया है प्रवृत्त नहीं किया जा सकता। यदि अनुच्छेद 13 (2) के अर्थान्तर्गत आदेश विधि है तो परिणाम यह होगा कि यद्यपि आदेश यह कथित करता है कि किसी विशेष मूल अधिकार का प्रवर्तन आपात् की कालावधि के दौरान निलम्बित है इस आदेश को मूल अधिकार को आलोचनाधीन करने में अनुच्छेद 13 (2) की सहायता के साथ जांचा जा सकता है जिसका प्रवर्तन निलम्बित कर दिया गया है। हमारी राय में इसका परिणाम अनुच्छेद 359 को पूर्णतः निरर्थक बनाना होगा। चूंकि तब तदधीन की गई इस घोषणा का, कि कतिपय मूल अधिकारों का प्रवर्तन आपात् की कालावधि के दौरान निलम्बित कर दिया गया है, कोई अर्थ नहीं होगा। इस लिए सुसंगत अर्थान्वियन के सिद्धांत को लागू करते हुए हमारी यह राय है कि अनुच्छेद 359 के अधीन पारित आदेश अनुच्छेद 13 (2) के प्रयोजन के लिए विधिसम्मत हो सकता है चाहे इसे उसका विस्तृत भाव में विधि मान लिया जाए इस लिए इसका अर्थ यह है कि अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश अनुच्छेद 359 से स्वयं अनुच्छेद 359 से बल प्राप्त करता है और उसके भाव के अनुसार प्रभावी होता है और यह अनुच्छेद 13 (2) द्वारा प्रवारित नहीं हो सकता। और उसे संविधान के भाग 3 के किसी भी उपबंध के अधीन जिसे यह निलम्बित करता है जांचा नहीं जा सकता।

8. इस संबंध में गुलाम सारवर बनाम भारत संघ[1] के मामले में इस

[1] [1967] 2एस० सी० आर० 271.

न्यायालय के निर्णय का अवलम्ब लिया गया है जहां पर हमने अनुच्छेद 359 के अधीन स्वयं राष्ट्रपति के आदेश के बीच और उस आदेश के प्रभाव के बीच प्रभेद किया था। उस मामले में यह मत व्यक्त किया गया था कि "स्वयं सांविधानिक उपबंधों के बल से मूल अधिकारों के वंचन और सांविधानिक उपबंधों के अधीन उसे प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में राष्ट्रपति द्वारा किए गए आदेश द्वारा किए गए वंचन के बीच स्पष्ट भेद है। आगे यह मत व्यक्त किया गया था कि अनुच्छेद 359 (1) स्वबल से प्रवृत्त नहीं होता। राष्ट्रपति को इस बात की घोषणा करते हुए एक आदेश करना होता है कि मूल अधिकार या अधिकारों के संबंध में न्यायालयों को समावेदित करने का अधिकार निलम्बित कर दिया गया है। वह केवल ऐसा आदेश कर सकता है जो विधिमान्य है आगे यह मत व्यक्त किया गया था कि अनुच्छेद 14 के अधीन न्यायालय को समावेदित करने के अधिकार को निलम्बित करने में अनुचित भेदभाव करने वाला आदेश प्रारम्भ से ही शून्य होगा और यह एक बृहत्तर आदेश होगा।

9. हमें अत्यधिक आदर के साथ यह कहना चाहिए कि इस बात क समझना कठिन है कि किस प्रकार से अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश जो मूल अधिकारों के प्रवर्तन को निलम्बित करता है उसे मूल अधिकार के अधीन जांचा जा सकता है। यह सत्य है कि अनुच्छेद 358 और अनुच्छेद 359 (1) के बीच भेद है। अनुच्छेद 358 स्वबल से अनुच्छेद 19 द्वारा गारण्टीकृत मूल अधिकारों को निलंबित करता है। अनुच्छेद 359 (1) दूसरी ओर स्वबल से किसी मूल अधिकार को निलंबित नहीं करता है किन्तु यह राष्ट्रपति को आपात् की कालावधि के दौरान किसी मूल अधिकार के प्रवर्तन को निलंबित करने की शक्ति देता है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि किसी विशेष मूल अधिकार के प्रवर्तन को निलंबित करने वाला अनुच्छेद 359 (1) के अधीन पारित कोई आदेश उसी मूल अधिकार के अधीन जांचा जाएगा जिसे यह निलंबित करता है। हमारी राय में ऐसा तर्क सर्किल में करना होगा और अनुच्छेद 359 को पूर्णतः निरर्थक बनाना होगा ऐसा प्रतीत होता है कि गुलाम सरवर के मामले में बहुमत का पक्षकथन भी इस तथ्य का बोध था कि वह दलील, जिस पर इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया है कि अनुच्छेद 359 के अधीन किया गया आदेश अनुच्छेद 14 के अधीन जांचा जा सकता है यद्यपि, उस अनुच्छेद को निलंबित करता है की आलोचना की जा सकती है कि यह एक परिधि में तर्क था। तथापि, इस दलील का, आदेश और उस आदेश के प्रभाव के बीच भेद करके उत्तर दे दिया गया था और यह मत व्यक्त किया गया था कि यदि आदेश अनुच्छेद 14 का अतिक्रमण नहीं करता तो केवल विधिमान्य रूप से अनुच्छेद 14 के अधीन मूल अधिकार को प्रवर्तन करने के अधिकार को हटा देता है। अत्यधिक आदर के साथ

1967(11) eILR(PAT) SC 1

इस दलील का और उस भेद का, जिस पर यह आधारित है, मूल्यांकन करना कठिन है। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि यदि अनुच्छेद 359 का बिल्कुल कोई अर्थ है और इसे संविधान से मिटाया जाना नहीं है तो तद्धीन पारित आदेश किसी मूल अधिकार को निलंबित करता है उसे उसी मूल अधिकार के अधीन जांचना संभव नहीं है जिसे यह निलंबित करता है। यदि ऐसा अनुज्ञेय होता तो अनुच्छेद 359 के अधीन कोई आदेश वास्तव में पारित न किया जाता। यदि अनुच्छेद 359 को निरर्थक नहीं करना है तो यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि तद्धीन पारित कोई आदेश उसी मूल अधिकार के अधीन नहीं जांचा जा सकता जिसका प्रवर्तन यह निलंबित करता है। इस लिए हम सादर गुलाम सारवार के मामले में अपनाए गए दृष्टिकोण से मतभेद रखते हैं और यह अभिनिर्धारित करते हैं कि अनुच्छेद 359 (1) के अधीन पारित कोई आदेश अनुच्छेद 13 (2) की सहायता से जांचा जा सकता है जिस मूल अधिकार के अधीन प्रवर्तन केवल निलंबित कर दिया गया है। इसलिए पिटीशनरों की ओर से उठाए गए प्रथम प्रश्न में कोई बल नहीं है।

10. हमें पिटीशनरों द्वारा उठाए गए द्वितीय प्रश्न में भी कोई बल दिखाई नहीं देता। जैसा कि हम पहले ही उपदर्शित कर चुके हैं कि अनुच्छेद 359 इस बात की परिकल्पना करता है कि किसी विशेष मूल अधिकार के प्रवर्तन को निलंबित करने के लिए तदधीन पारित कोई आदेश भारत की सुरक्षा के लिए है इसलिए इस बात की जांच करना आवश्यक नहीं है कि क्या निलंबित किसी विशेष मूल अधिकार और सुरक्षा के बीच कोई संबंध है। अनुच्छेद 359 स्वयं यह बात मानता है कि भारत की सुरक्षा के लिए तद्धीन किसी मूल अधिकार के प्रवर्तन को निलंबित करने का आदेश पारित करना आवश्यक हो सकता है। यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि अनुच्छेद 359 (1) संविधान के भाग 3 में मूल अधिकारों के प्रवर्तन के निलम्बन के लिए आपात् की कालावधि के दौरान ही उपबंध करता है जिसका अर्थ है मूल अधिकारों में से किसी के प्रवर्तन का निलंबन जिसे राष्ट्रपति भारत की सुरक्षा के लिए आवश्यक समझता है। हम यह नहीं समझते कि अनुच्छेद 22 के अधीन या अनुच्छेद 31 (2) के अधीन मूल अधिकारों को ही अनुच्छेद 359 के अधीन क्यों निलंबित किया जाता है। अनुच्छेद 359 स्पष्ट रूप से यह दर्शाता है कि भाग 3 में कोई मूल अधिकार आपात् की कालावधि के दौरान निलंबित किया जा सकता है और हम उसके असंदिग्ध और स्पष्ट शब्दों को देखते हुए अनुच्छेद 359 को परिसीमित नहीं कर सकते और यह नहीं कह सकते कि अनुच्छेद 22 और 31 (2) के अधीन मूल अधिकारों के प्रवर्तन को ही निलंबित किया जा सकता है।

यह हो सकता है कि प्रथमदृष्टया इन दो मूल अधिकारों का भारत की सुरक्षा के साथ स्पष्ट संबंध है परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि अन्य मूल अधिकारों का आपात् के दौरान ऐसा संबंध नहीं है। किसी भी दशा में अनुच्छेद 359 स्वयं इस आधार पर आगे बढ़ती है कि सभी या किसी मूल अधिकार के प्रवर्तन का निलंबन भारत की सुरक्षा की दृष्टि से है। और वह इस प्रकार से राष्ट्रपति को ऐसे प्रवर्तन को निलंबित करने की शक्ति देता है यदि वह इसे इस प्रयोजन के लिए आवश्यक समझता है। पिटीशनरों की ओर से दी गई दूसरी दलील भी नामंजूर की जानी चाहिए।

11. जहां तक तीसरी दलील का संबंध है हमने पहले ही उपदर्शित कर दिया है कि अनुच्छेद 359 (1) के अधीन पारित किसी विशेष मूल अधिकार के प्रवर्तन को निलंबित करने वाला कोई आदेश उसी मूल अधिकार के अधीन नहीं जांचा जा सकता। हम यह नहीं समझते कि किस प्रकार से यदि अनुच्छेद 358 (1) के अधीन कोई आदेश अनुच्छेद 14 को निलंबित करता है तो इसकी विधिमान्यता को अभी भी उसी अनुच्छेद के अधीन जांचा जा सकता है। हमने पहले ही गुलाम सरवर के मामले में अपनाए गए दृष्टिकोण से अपनी सादर विसम्मति प्रकट की थी और इस दलील को भी नामंजूर किया जाना चाहिए।

12. चूंकि अनुच्छेद 14 के अधीन मूल अधिकारों के प्रवर्तन को अनुच्छेद 359 के अधीन राष्ट्रपति के आदेश द्वारा निलंबित किया गया था उस आदेश के उस अनुच्छेद के अधीन बुरा होने का प्रश्न नहीं उठता चाहे हम यह धारणा कर लें कि अधिनियम और नियमों के अधीन निरोध के लिए उपबंध निवारक निरोध अधिनियम के अधीन निरोध के उपबंधों की अपेक्षा अधिक कड़े हैं। यह दलील भी असफल होती है।

13. पांचवी दलील के बारे में यह कहा गया है कि अनुच्छेद 14, 21 और 22 के अधीन मूल अधिकारों के प्रवर्तन को निलंबित करने वाले राष्ट्रपति द्वारा पारित आदेश के शब्दों पर स्पष्ट रूप से इस बारे में अधिनियम और नियमों में उपबंध होना चाहिए कि ये मूल अधिकार प्रवर्तनीय नहीं होंगे। हम यह नहीं समझते कि किस प्रकार से कोई उपबंध अधिनियम और नियमों में इस बारे में बनाए जा सकते हैं। अधिनियम या नियमों में ऐसा उपबंध स्पष्ट रूप से असांविधानिक होगा। केवल इसलिए कि अनुच्छेद 359 (1) में यह कहा गया है कि राष्ट्रपति किसी विशेष मूल अधिकार के प्रवर्तन को निलंबित कर सकेगा आपात् के दौरान किसी मूल अधिकार के प्रवर्तन को निलंबित करना संभव है। राष्ट्रपति ने प्रस्तुत मामले में जिस बात का उपबंध किया है

1967(11) eILR(PAT) SC 1

वह यह है कि अनुच्छेद 14, 21 और 22 के अधीन मूल अधिकारों का प्रवर्तन निलंबित रहेगा यदि किसी व्यक्ति को भारत रक्षा अध्यादेश के अधीन (जिसे बाद में अधिनियम द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया था) या तद्धीन बनाए गए नियमों या आदेशों के अधीन ऐसे अधिकार से वंचित किया गया है। इस बात पर जोर देने की आवश्यकता है कि राष्ट्रपति का आदेश अध्यादेश (जिसे बाद में अधिनियम द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया था) या तद्धीन बनाए गए नियमों या आदेशों के अधीन निलंबन के बारे में है। इसमें यह नहीं कहा गया है कि ऐसे अधिकार का प्रवर्तन निलंबित कर दिया गया है यदि किसी व्यक्ति को अध्यादेश या तद्धीन बनाए गए नियमों या आदेशों द्वारा वंचित किया गया है। इसलिए यह आवश्यक नहीं है कि अनुच्छेद 14, 21 और 22 के अधीन मूल अधिकारों के प्रवर्तन को निलंबित करने वाले अधिनियम या नियमों में स्पष्ट उपबंध होना चाहिए। राष्ट्रपति के आदेश का स्पष्ट अभिप्राय यह है कि अनुच्छेद 14, 21 और 22 के अधीन यदि किसी व्यक्ति के किसी मूल अधिकार पर अध्यादेश (बाद में अधिनियम द्वारा प्रतिस्थापित) या तद्धीन बनाए गए किसी नियम या आदेश के अधीन की गई किसी कार्यवाही द्वारा आक्रमण हुआ है तो उस कार्यवाही को उन मूल अधिकारों के आलोचनाधीन बनाने में नहीं जांचा जा सकता। इसलिए अनुच्छेद 14 और 21 के अधीन मूल अधिकारों के प्रवर्तन के निलंबन के लिए अधिनियम या नियमों में कोई स्पष्ट उपबंध करना नहीं है। पांचवीं दलील भी असफल होती है।

14. छठी दलील यह है कि अनुच्छेद 25 (5) जो यह अधिकथित करता है कि निलंबन के आधार निरुद्ध व्यक्ति को संसूचित किए जाने चाहिएं, अभी भी लागू होना चाहिए। हम इस दलील को समझने में समर्थ नहीं हैं। यदि राष्ट्रपति का आदेश विधिमान्य रूप से किया गया है--जैसा कि हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि यह विधिमान्य रूप से किया गया है—और यदि यह अनुच्छेद 22 को निलंबित करता है—चूंकि यह करता है—हम यह समझने में असमर्थ हैं कि किस प्रकार से खण्ड 5 जारी रहता है चूंकि यह केवल अनुच्छेद 22 का भाग ही है जिसे निलंबित किया गया है। इसलिए, अनुच्छेद 22 (5) के अधीन कैदी को कोई आधार बताने का कोई प्रश्न नहीं है यदि निरोध अधिनियम या नियमों के अधीन है, चूंकि सम्पूर्ण अनुच्छेद 22 निलंबित किया गया है। इस शीर्षक के अधीन दलील भी नामंजूर की जाती है।

15. अब हम पिटीशनरों की ओर से उठाए गए गौण प्रश्नों पर आते हैं। पहले यह कहा गया है कि नया आदेश कैदियों को सूचित नहीं किया गया था। राज्य की ओर से इस बात से मना किया गया है। हमें इस बात का

1967(11) eILR(PAT) SC 1

कोई कारण दिखाई नहीं देता कि नया आदेश, जो उसी दिन पारित किया गया था जिस दिन पूर्व आदेश रद्द किया गया था, संसूचित क्यों नहीं किया गया। हमें राज्य के कथन पर अविश्वास करने के लिए यह नहीं दर्शाया गया है कि नया आदेश प्रत्येक मामले में संसूचित कर दिया गया था और इसलिए इसके न संसूचित करने के आधार पर कोई दलील असफल होनी चाहिए।

16. इसके पश्चात् यह दलील दी गई कि आदेश अनुच्छेद 166 द्वारा यथा अपेक्षित प्ररूप में नहीं है। यह कहना पर्याप्त है कि अनुच्छेद 166 जम्मू-कश्मीर राज्य को लागू नहीं होता। हमें यह देखने के लिए, कि क्या जम्मू-कश्मीर संविधान की धारा 45 द्वारा अपेक्षित प्ररूप में आदेश है, जम्मू-कश्मीर संविधान को देखना होगा। यह स्पष्ट है कि आदेश जम्मू-कश्मीर संविधान की धारा 45 के द्वारा अपेक्षित प्ररूप में है। इसलिए यह उपधारणा की जानी चाहिए कि इसे विधिमान्य रूप से पारित किया गया था जब तक कि पिटीशनर यह न दर्शा दें कि यह विधि द्वारा यथा अपेक्षित रूप से पारित नहीं किया गया था। यह दर्शाने के लिए पिटीशनरों की ओर से कोई प्रयत्न नहीं किया गया है। इसलिए इस बारे में दलील भी नामंजूर की जाती है।

17. अंत में यह दलील दी गई कि इन मामलों में असद्भावपूर्ण आदेश पारित किए गए थे। राज्य की ओर से इस बात से मना किया गया है। ऐसे कोई आधार नहीं दर्शाए गए हैं जो हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचा दें कि नए आदेश जो किए गए थे असद्भावपूर्ण थे। जबकि आदेशों की आवश्यकता इसलिए भी थी क्योंकि **लखनपाल के मामले**[1] में इस न्यायालय द्वारा उपदर्शित प्रकार से पुनर्विलोकन नहीं किया गया था। नया आदेश जो किया गया था उन्हीं तथ्यों पर और उन परिस्थितियों में इसे **जगदेव सिंह के मामले**[2] में इस न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखते हुए विधिमान्य माना जाना चाहिए।

18. इसलिए पिटीशनें असफल होती हैं और तद्द्वारा खारिज की जाती हैं।

न्यायाधिपति हिदायतुल्लाह के अनुसार :

19. मैं इस बात से सहमत हूं कि पिटीशनों को खारिज किया जाना चाहिए। चूंकि मैं उस संविधान पीठ का सदस्य था, जिसने **गुलाम सरवर**[3] का मामला विनिश्चय किया था मैं इसके स्पष्टीकरण में कुछ शब्द कहना चाहूंगा। मुख्य न्यायाधिपति सुब्बाराव के निर्णय में जिसका कि मैं एक पक्षकार था, इस प्रश्न पर कुछ अप्रसन्नता अभिव्यक्त की गई थी जिस पर उसे अभी सुनाए गए

---

[1] ए० आई० आर० (1967) एस० सी० 1507.

[2] [1968] 1 एस० सी० आर० 197.

[3] [1967] 2 एस० सी० आर० 271.

निर्णय में नामंजूर कर दिया गया था। भूतपूर्व मुख्य न्यायाधिपति ने सामान्य कानूनी नियम 1418/30-1062 के विस्तार को (जिसने विदेशियों को अनुच्छेद 21 और 22 के लाभों को निलंबित कर दिया था) सामान्य कानूनी नियम 1275/27-8-1965 के द्वारा पुष्ट कर दिया था। बाद के आदेश में पहले से निलंबित दो अनुच्छेदों के अतिरिक्त अनुच्छेद 14 को भी निलंबित कर दिया था। इस निलंबन को इस आधार पर पुष्ट कर दिया गया था कि नागरिकों और विदेशियों के बीच स्पष्ट वर्गीकरण था और युद्ध और आपात् की दशा में विदेशियों को एक वर्ग माना जा सकता था। दूसरे शब्दों में आदेश स्वयं अनुच्छेद 14 के आधार पर जांचा गया था जिसे राष्ट्रपति के आदेश ने निलंबित करना चाहा था।

20. अभी सुनाए गए निर्णय में यह कहा गया है कि गुलाम सरबर[1] के मामले में दलील समझना कठिन है और अनुच्छेद 14 का निलंबन उसी अनुच्छेद के अधीन आदेश की परीक्षा को रोकता है। मुझे यह समझना चाहिए था कि मैंने पर्याप्त रूप से गुलाम सरबर के मामले में प्ररूप निर्णय की चर्चा के दौरान स्थिति को स्पष्ट कर दिया था परन्तु ऐसा प्रतीत होता है के निर्णय में भाषा के विस्तार के बारे में मेरे संदेहों के बावजूद वह विनिश्चय, जिसका कि मैं एक पक्षकार था, वही अर्थ देता रहा जो उसे अब दिया जा रहा है। मैं बहुत सम्मान के साथ यह कह सकता हूं कि अब दिया गया निर्णय भी अन्य दिशा में भाषा की दृष्टि से उदार है इसमें सच्चाई है।

21. यद्यपि अनुच्छेद 359 (1) के अधीन मूल अधिकार का निलंबन या तो सम्पूर्ण भारत के लिए या भारत के राज्य क्षेत्र के किसी भाग के लिए किया जा सकता है गुलाम सरबर का मामला यह उपदर्शित करता है कि ऐसी कोई बात नहीं है जो राष्ट्रपति को किन्हीं व्यक्तियों की श्रेणी को आदेश के विस्तार को निर्बन्धित करने से रोकती हो बशर्ते कि आदेश का प्रवर्तन किसी क्षेत्र और किसी कालावधि तक सीमित हो। चूंकि आदेश सम्पूर्ण भारत को लागू होता था और आपात् के दौरान आपात् की कालावधि के लिए था यद्यपि यह किसी श्रेणी अर्थात् विदेशियों को प्रभावित करता है इसे पुष्ट कर दिया गया था। अनुच्छेद 14 की प्रासांगिकता नहीं है। यह इसलिए किया गया था कि क्योंकि दलील यह थी कि आदेश सम्पूर्ण भारत में या उसके किसी राज्य क्षेत्र के किसी भाग के संदर्भ में ही हो सकता है न कि किसी श्रेणी, जैसे विदेशियों के संबंध में। उसका अर्थ यह है कि आदेश पर अनुच्छेद 359 (1) के शब्दों के संबंध में विचार किया गया था। तथापि, अनुच्छेद 14 के लिए गुंजाइश छोड़ दी गई थी चूंकि

[1] 1967] 2 एस० सी० आर० 271.

1967(11) eILR(PAT) SC 1

सिद्धान्त रूप से संभव मामलों के लिए दुर्भाग्य से केवल सिद्धान्त रूप से संभव मामलों मे जिसके लिए स्वयं शक्ति का प्रयोग भेदभाव के लिए बहाना हो सकता है। दूसरे शब्दों में असद्भावपूर्ण कार्यवाही और शक्ति का खुला दुरुपयोग, कुछ गौण प्रयोजनों के लिए किया जा सकता है। यह कड़ा प्रतिबन्ध ही गुलाम सरबर के मामले में था। परन्तु यदि उस निर्णय से किसी विस्तृत अर्थ का आशय था तो मैं उससे विसम्मत हूं और यह कहता हूं कि ऐसे विस्तृत कथन का पक्षकार होने का आशय नहीं था। मुख्य न्यायाधिपति सुब्बाराव के निर्णय में जैसा अभिव्यक्त किया गया है एक भिन्न विचार है, उसी कारण से मैं अभी दिए गए निर्णय की भाषा के विस्तार का समर्थन नहीं कर सकता जो स्पष्ट रूप से बिल्कुल भी कोई प्रतिबन्ध नहीं करती। इसलिए मैं प्रस्तावित आदेश से सहमत हूं परन्तु मेरे अपने तर्क हैं।

पिटीशनें खारिज की गई।

सरोहा